हिमाचल प्रदेश के प्रमुख पारम्परिक लोकगायकों का लोकसंगीत क्षेत्र में योगदान

डॉ० सोनिका शर्मा
सिधंवा, बंजार, जिला कुल्लू, हिमाचल प्रदेश

सार–संदर्भ

देवभूमि हिमाचल की पवित्र धारा में अनगिनत लोक कलाकारों का सृजन किया है जिन्होनें अपनी कलाकृतियों द्वारा लोकसंगीत रूपी पौधे को सजीव रखा और जिसकी खुशबू से आज भी हिमाचल के लोगों का जनजीवन महकता है, जिनकी अविस्मरणीय कलाकृतियों में लोकजीवन की छटा बिखरती है। उनसे श्री प्रताप चंद शर्मा श्री ज्वाला प्रसाद शर्मा , श्री कृष्ण सिंह ठाकुर और श्री अच्छर सिंह परमार के लोकसंगीत के प्रति योगदान को भुलाया नहीं जा सकता, जिनके स्वयं के लिखे गीत भी आज लोकगीतों का रूप ले चुके हैं जो विभिन्न अवसरों पर गाए गुनगुनाए जाते हैं। उन कलाकारों का आभार व्यक्त करने और उनकी कलाकृतियों को संजोने का यह सुअवसर मिला है ताकि भावी पीढ़ियाँ अपने पूर्वजों द्वारा संग्रहित लोकसंगीत रचनाओं से लाभान्वित हो सकें।

कुजीं शब्द– लोकगीत, लोकसंगीत , लोक कलाकार, अमूल्य कलाकृतियां, लाभान्वित।

हिमाचल को अभी तक भारतवर्ष का सबसे शांतिप्रिय राज्य होने का गौरव प्राप्त है। शेष दुनिया की गतिविधियों से अछूता यह प्रदेश "देवभूमि" कहलाता है। इसका परिचय हमें यहां पग–पग पर निर्मित मंदिरों तथा यहां की सांस्कृतिक धरोहर से प्राप्त हो जाता है। अनेक कवियों ने हिमाचल या जिस हिमालय का वर्णन अपनी संस्कृत रचनाओं में किया, उनमें से महाकवि कालीदास, कविवर भटट् शास्त्री भी एक हैं। हिमाचल प्रदेश की स्थापना 15 अप्रैल 1948 को पंजाब तथा शिमला की 30 रियासतों को मिलाकर की गई और 25 जनवरी 1971 को पूर्ण राज्य के रूप में उदघाटन किया। हिमाचल प्रदेश को क्षेत्रफल 55,673 वर्ग किलोमीटर है तथा इसे 12 प्रशासनिक खण्डों में विभाजित किया गया है। क्षेत्रफल की दृष्टि से हमीरपुर सबसे छोटा तथा लाहौल–स्पीति सबसे बड़ा जिला है और जनसंख्या की दृष्टि से कांगड़ा प्रथम स्थान पर है। प्रदेश के 12 जिलों में बांटा गया है। हिमाचल प्रदेश के संक्षिप्त परिचय के साथ जिले के पारम्परिक लोककलाकारों का संगीत क्षेत्र में योगदान पर प्रकाश डाला गया है। हिमाचल प्रदेश अपनी इसी अनमोल सांस्कृतिक धरोहर के कारण समस्त भारतीयों के लिए आकर्षण का केन्द्र है।

'लोक' शब्द की उत्पत्ति के विषय में विद्वानों में मतभेद पाए जाते है वेदों, उपनिषदों, भरतमुनि के नाट्यशास्त्र , पाणिनी की अष्टाध्यायी, महर्षि व्यास की 'शतसहस्त्री संहिता' आदि में 'लोक' शब्द का प्रयोग मिलता है। पाश्चत्य भाषा में 'लोक' को 'फोक' कहा गया है।

'एनसाइकलोपिडिया ब्रिटेनिक' में लोक शब्द की व्याख्या इस प्रकार की गई है– 'एक आदिम जाति में वे सभी व्यक्ति फोक अर्थात् लोक होते हैं, जिनसे वह सम्प्रदाय बना है। वास्तविक अर्थ में 'लोक' शब्द साधारण समाज में पृथ्वी पर रह रही वह जनता है, जिसमें पूर्व संचित परम्पराएं, विश्वास, भावनाएं, आदर्श सुरक्षित है। अतः 'लोक' शब्द अत्यन्त सम्मान सूचक बन गया है।

हिमाचली लोकसंगीत की निजी विशेषताएं हैं। यहां का लोकसंगीत भी पहाड़ी घाटियों सा गम्भीर, व्यापक, पर्वतीय वायु सा स्वच्छ और नदी नालों सा थिरकन भरा एंव चंचल व सरल है। लोकसंगीत ही

पीछे छोड़कर गीतों को मधुर कंठ से छंदोबद्ध करता है और वे ही लोकगीत कहलाते हैं। यह कहना गलत नहीं होगा कि लोकगीत व लोकसंगीत हिमाचली जीवन में ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण विश्व में जनसाधारण के हृदय में व धरती के कण–कण में बसा हुआ है। यह अमूल्य निधि के रू॰ में हमें प्राप्त हुआ है।

'कला' चाहे जैसी भी हो, किसी को विरासत में मिलती है तो किसी को अपनी प्रतिभा से हासिल होती है। 'कला' को भी एक साधन माना गया है, यह यदि हिमाचल जैसे शांत क्षेत्रों में हो तो सोने पर सुहागा बन जाता है। लोक कलाकार इस परम्परा को प्राचीन समय से पालन कर रहे हैं तथा लोकगीतों की वास्तविकता को अभी तक बरकरार रखा हुआ है। यह लोकगीत आने वाली पीढ़ी के पास भी विरासत के रूप में सुरक्षित रहे तथा भविष्य में सुनने के लिए उपलब्ध हो सकें।

'श्री कृष्णसिंह ठाकुर' ने हिमाचल का चित्रण करने वाला गीत 'लागा ढोलो रा ढमाका' म्हारा हिमाचलों बड़ा बांका' जब गुनगुनाया तो लोकगायिकी के पितामह मधुर आवाज के मालिक का चेहरा आम लोगों के दिलो दिमाग पर गहरी छाप छोड़ गया। जब यह गीत आकाशवाणी केन्द्र से प्रसारित किया जाता है तो लोगों के होंठ स्वयं ही हिलने शुरू हो जाते है। इनका जन्म 1919 में जिला सिरमौर के राजगढ़ जनपद की पझौता घाटी के गाँव कोटला बांगी में हुआ। बचपन से ही संगीत का शौक होने के कारण 'बाबा मंगलदास बैरागी' से गायन की शिक्षा ली। बाल्यावस्था से युवावस्था तक आते–आते वे नामचीन पहाड़ी लोक कलाकार बन गए और सन् 1956 में आकाशवाणी केन्द्र शिमला से जुड़ गए। यह आकाशवाणी के बी०हाई० कलाकार थे। इन्होनें प्रदेश के प्रमुख मेलों इत्यादि के अवसरों पर सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत किए तथा भाषा एंव संस्कृति विभाग के सौजन्य से सिरमौरी नाटी का प्रस्तुतीकरण करके अपने जिले और प्रदेश का नाम ऊँचा किया। हिमाचल की सांस्कृतिक धरोहर को संरक्षित रखने के लिए विभिन्न संस्थाओं ने इन्हें सम्मानित किया और साथ ही हिमाचल कला संस्कृति भाषा अकादमी के द्वारा इन्हें पैंशन दी जाती थी। आज भी इनके गीत अमर हैं। ऐसे बहुत कम गायक होते हैं तो अपनी आवाज को वृद्धावस्था तक भी जंवा रखते हैं। यह ऐसी आवाज थी जो काँटने की तरह खनकती हुई शिखरों के उस पार तक जा पहुँचे और सुनने वालों के दिलों की गहराई में उतरे। इन्होंने नए लोक कलाकारों के लिए सफलता के द्वार खोल दिए। जिस इन्सान ने अपनी इस सांस्कृतिक धरोहर को इतनी हिफाजत से संजोए रखा उनका निर्धन 20 अप्रैल 1997 को हो गया। यह वह पारम्परिक लोक गायक है जिनकी सेवाओं और गीतों के प्रति अटटू योगदान की प्रदेशवासियों को हमेशा याद दिलाएगा। इनके द्वारा गाया मशहूर गीत 'लागा ढोलो रा ढमाका' पार्श्व गायक महेन्द्र कपूर ने इसे सुनकर गाने की इच्छा प्रकार की थी और तब एस०शशि संगीत कम्पोजर ने आकाशवाणी शिमला में महेन्द्र ने, कृष्ण सिहं ठाकुर जी से तर्ज सुनकर रिकार्डिगं करवाई। इस गीत के बोल और स्वरलिपि इस प्रकार हैः

स्थायी

गीत के बोलः – लागा ढोलो रा ढमाका, मेरा हिमाचलो बड़ा बांका,

अंतरा

आलू री म्हारे खेती जो उपजो, लागे सेवोंरे बगीचे,
बामणे खे म्हारे लोइए सुथणु, बैठणे खे दलीचे,
हो मेरा हिमाचलो बड़ा बांका।

स्थायीः स्वरलिपि (ताल कहरवा)

सा	सा	–	रे	रे	–	रे	ग	
ला	गा	ऽ	ढो	लो	ऽ	रा	ढ	
X				०				
म	प	–	नी	ध	प	ग	रे	
मा	का	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	मे	रा	
X				०				
–	म	ग	रे	सा	–	नी	ध	
ऽ	हि	म	च	लो	ऽ	ब	ड़ा	
X				०				
नी	–	स	–	–	–	–	–	–
बां	ऽ	का	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ
X				०				
अंतरा								
–	ध	ध	ध	ध	–	ध	–	
ऽ	आ	लू	री	म्हा	ऽ	रे	ऽ	
X				०				
–	ध	ध	म	प	प	सां	–	
ऽ	खे	ती	जो	उ	प	जो	ऽ	
X				०				
–	नी	ध	प	म	ग	रे	ग	
ऽ	से	वा	रे	ला	ऽ	ओ	ढ	
ध	प	–	–	–	–	–	–	
गी	चे	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ	
X								

इस लोकगीत का अंतरा इसी प्रकार गाया जाता है। इसमें राग काफी की छाया प्रतीत हो रही है। कहीं–कहीं पर शुद्ध गांधार का भी प्रयोग हो रहा है।

हिमाचल प्रदेश जिला मण्डी के गाँव रियूर में "पं० ज्वाला प्रसाद शर्मा" जी का जन्म 31 जनवरी 1936 को हुआ। इनके पिता का नाम स्व० श्री शंकरदास और माता का नाम स्व० श्रीमति हिमा देवी शर्मा था। इनके माता– पिता अच्छे लोकगायक थे लेकिन पारिवारिक शुभअवसरों पर ही यह गाया करते थे। इनकी माता के पास लोकगीतों का खजाना था जो पीढ़ी दर पीढ़ी आगे तक चलता आ रहा है अर्थात लोक संगीत तो इनके खून में ही है। इन्होनें उन गीतों को तालबद्ध किया, जो ताल रहित थे। शास्त्रीय संगीत की शिक्षा स्व० श्री संतराम जी (लाहौर) से प्राप्त की। इन्होनें हिमाचली संगीत जिसमें लोकगीत व नृत्य शामिल है, खोयी प्रतिभा को उजागर करने का सकंल्प लिया और सफल भी हुए। बाल कलाकार के रूप में सांस्कृतिक कार्यक्रमों में विशेष प्रोत्साहन मिलने पर लोक संगीत में रूचि दिन–प्रतिदिन बढ़ती गई। इन्होनें मण्डी और बिलासपुर क्षेत्र के लोकगीत, भजन , संस्कार गीत पर शोध कार्य करके उन गीतों की वही तर्ज रखते हुए ताल युक्त गायिकी देकर उनमें सुंदरता भरने का प्रयास किया आकाशवाणी, दूरदर्शन पर व अन्य सांस्कृतिक कार्यक्रमों में लोकगीतों की प्रस्तूति कर लोकसंगीत जगत में खूब नाम कमाया। हिमाचल कहानी पर आधारित फिल्म में गाँव के मुखिया की भूमिका और हिमाचल स्वास्थय विभाग द्वारा बनाई गई फिल्म में पं० का अभिनय करके एक अच्छा कलाकार पात्र बने। लोकसंगीत के लिए अर्पित सेवाओं के लिए इन्हें सम्मानित भी किया गया। यह आकाशवाणी शिमला के बहुत पुराने और जाने माने कलाकार है। 'यादां रे परछावें' नामक पुस्तक में इनके द्वारा बनाए गए गीत है, जो आज पारम्परिक लोकगीतों का रूप ले चुके हैं। हि० कला संस्कृति विभाग द्वारा इसकी खरीद दो बार हो चुकी है। भाषा अकादमी द्वारा बनाई गई कैसेट 'नैणा माँ के भजन' व 'परम्परा' के लिए इन्हें सम्मानित किया गया। यह अभी भी बहुत जोरदार गाते हैं। प्रदेश में इनके प्रशसंक कम नहीं है। विरासत में मिली लोकसंगीत व लोकगीतों की धरोहर अमूल्य निधि को संजोए तथा सारे परिवार का सहयोग इनकी प्रतिभा को ओर निखारता है। यह एक लोकगायक , पहाड़ी लेखक, नाटक कलाकार, आकाशवाणी में मण्डयाली उद्घोषक व संगीत निर्देशक के रूप में विशेष उपलब्धियां प्राप्त कर चुके है। इनके कई गीत जो इन्हें विरासत में मिलें वे इस प्रकार हैः–

नमाणेया ओ हंसा केढ़ी जे बेला तै लया बनवास (विरहगीत)
सिम्बली रे दस फूल चम्बे कली एक भली (जन्म संस्कार गीत)
धीयां पाहोणी दिन चार बाबा (लग्न विदाई गीत)
बेटी रमती भली सौहरे (विदाई गीत)
ऊँचे कोट नीवां दरवाजा (लोकभजन)
आँगण म्हारा से कुंगुए लिपया (लाहणी गीत)

सैकड़ों लोकगीतों को अकेले व अपने साथी कलाकार अच्छर सिंह परमार के साथ गाकर गत् 30–40 वर्षों में लोकप्रिय ही नहीं बनाया बल्कि युवा गायकों को भी लोकगायिकी अपनाने को प्रेरित किया उनमें से कुछ लोकगीत हैं सोहणी –सोहणी शिमले री सडका जिंदे इत्यादि। इनके लोकप्रिय गीत की एक रचना इस प्रकार है– 'नामाणेया हंसा' गाने का भाव यह है कि परिवार के प्रियजन के बिछुड़ने या स्वर्गवास के उपरान्त जब पीड़ा का आभास होता है वह इस गीत में बखूबी झलकता है। इस लोकगीत की धुन में 'राग पीलू' की छाया देखी जा सकती है।

स्थायी स्वरलिपि (ताल कहरवा)

1	2	3	4	5	6	7	8
		रे	–	नि़	सा	सा	साम
		न	ऽ	मा	णे	या	ओ ऽ
ग	–	सा	सा	सा	सा	नि़	प
हंसा		सा	ऽ	ऽ	ऽ	के	ढ़ी
प	नि़	नि़	नि़	सा	सा	सा	स
जे	ऽ	बे	ऽ	ला	ऽ	ऽ	ऽ
नि़ सा	रेग	ग	ग	ग	ग	ग	रे
ऽ ऽ	ऽ ऽ	तैं	ऽ	ऽ	ऽ	ल	या
रे	रे	म	म	मप	ग	ग	रे
ऽ	ब	ऽ	न	ब ऽ	ऽ	ऽ	ऽ

हिमाचलवासियों को हिमाचली संगीत क्षेत्र में इनके सराहनीय योगदान का विशेष आभार प्रकट करना चाहिए क्योंकि लोकसंगीत की लुप्त हो रही विद्या को इन्होनें अभी तक संजोकर सुरक्षित रखा है।

हिमाचली लोकगायक 'श्री अच्छर सिंह परमार' जिला मण्डी के बिदरोही गाँव के रहने वाले तथा हिमाचल में अपनी कला का सिक्का जमाने वाले लोक कलाकार का जन्म व जून 1950 को हुआ। इनके पिता का नाम श्री बलिराम तथा माता का नाम श्रीमती अच्छरी देवी था। इनके पिता शास्त्रीय ज्ञाता थे और माता जी भी अच्छा गाती थीं अतः श्री परमार जी को संगीत विरासत में ही मिला। इन्होनें तृतीय श्रेणी से ही बाल कलाकार के रूप में अपनी प्रतिभा का जादू दिखाना शुरू किया। लोकगीतों से ही गाने ही शुरूआत की तथा समयानुसार इसमें रूचि बढ़ती चली गई । केवल संगीत ही नहीं, अपितु यह कई और प्रतिभाओं से भी परिपूर्ण हैं। यह अच्छे गायक, नाटकार, कहानीकार, रचनाकार, निर्देशक, वाचक हर क्षेत्र में सक्षम हैं। यह नियमित रूप से आकाशवाणी शिमला में कार्यरत रहे। इन्होनें अपनी कई पहाड़ी रचनाएं लिखी और उसे एक पुस्तक 'यादा रे परछावे' में निहीत किया। इनके सहकलाकार श्री ज्वाला प्रसाद शर्मा जी की पहाड़ी रचनाएँ भी पुस्तक में निहित हैं। इनके लिखे गीतों को पारम्पारिक लोकगीतों समझकर गाया जाता है। यह इस प्रकार हैं–

काली घघरी लयांया हो
चढ़ी आया पाणी देख, कुगरे तां सांढुए।
भर बरसाती मिंजो तेरी याद औदीं।
गल्ला मेरे प्यारा रियां।

इन्होंने अपने लोकगीतों को गाया और उन्हें बहुत सराहा भी गया। यह अत्याधिक लोकप्रिय हैं। लोगों ने इनके संगीत के प्रति लगाव और लोकसंगीत को ऊचाँइयों तक पहुँचाने के प्रयास को खूब पसंद किया है। लोकसंगीत को सही स्वरूप में कायम रखने तथा लोकगीतों के नाम पर अश्लील शब्दों का प्रयोग न हो, इसका इन्होनें विशेष ध्यान रखा है और पारम्परिक रूप बनाए रखने के लिए हमेशा प्रयास करते रहने की आवश्यकता है। पूर्वजों से मिली अमूल्य संपति को इन्होनें संजोकर रखा है।

इनका कहना है 'मैं लोकसंगीत के लिए बना हूँ और सारा जीवन इसी पर न्यौछावर कर दूगां।' लोकसंगीत क्षेत्र में इनके योगदान के लिए हिमाचलवासियों को इन पर नाज है। इनका गाया हुआ एक लोकगीत जो बहुत ही लोकप्रिय है। गीत के भाव हैं कि उच्च जाति के अमुक व्यक्ति का सम्बन्ध बराबर की जाति वाली नारी से न होकर निम्न जाति की नारी से हो जाता है तो प्रेयसी अपने प्रेमी को बुलावा देने के लिए बहुत ही सुंदर शब्दों में अपने मनोभावों को व्यक्त करती है।

गीत के बोल–

उचिया जे रीढ़िया मैं बंगला पुआदीं, लमिया रखांदी गज काती,
उचिया जे रीढ़िया मैं खाणा बणादी, ब्राह्मण लांदी रसोईया।

स्वरलिपि (ताल कहरवा)

1	2	3	4	5	6	7	8
सा	साम	म	म	ग	ग	ग	–
उ	चिया	जे	री	ढि	या	मैं	ऽ
–	मप	म	प	ध	प	म	ग
ऽ	बंग	ला	पु	आं	ऽ	दी	जो
म प	म	प	ध	ृ	म	–	–
बंग	ला	पु	आं	ऽ	छी	ऽ	ऽ
म	मम	म	प	–	–	नि	प
ल	मियां	र	खां	ऽ	ऽ	छी	ऽ
प	म	म	–	–	–	ग	–
ग	ज	का	ऽ	ऽ	ऽ	ती	ऽ
x				०			

शेष पूरा गीत इसी प्रकार गाया जाएगा। इस लोकगीत में 'राग तिलंग' की छाया आती है। कोमल धैवत का प्रयोग विवादी स्वर के नाते किया गया है। राग तिलंग का पूर्णतः रूप इस लोकगीत में देखने को मिलता है। सा नि सा ग म प म ग सा, ग म प नि सा नि प म, ग म ग सा राग तिलंग का आभास स्वरों से होता है। ग म प ध, म ग म ग सा कोमल धैवत का प्रयोग मधुरता बढ़ाने के लिए किया गया है।

'प्रताप चंद शर्मा' का कांगड़ा लोकगायन परम्परा के विकास में और कांगड़ी सृजित साहित्य में उल्लेखनीय योगदान है। श्री प्रताप चन्द शर्मा का जन्म 23 जनवरी,1927 को नलेटी तहसील, देहरा, कांगड़ा में हुआ। इनके पिता का नाम झाणू राम और माता का नाम कालो देवी था। इनके पिता जी को संगीत में रूचि थी तथा कथा–कीर्तनों में धार्मिक गायन किया करते थे। अतः इन्हें सांगीतिक वातावरण घर पर ही मिला। यह गायन का शौक बढ़ता ही चला गया। पहली बार 26 जनवरी, 1962 को आजादी के उपलक्ष्य में अपनी तुकबदीं का गीत गाया और इन्हें किसी के सहयोग से लोक सम्पर्क विभाग कांगड़ा की संगीत पार्टी में काम मिला। इन्हें संगीताचार्य श्याम सुंदर जी से कई राग–रागनियों का भी ज्ञान हुआ। वह 'वायलिन' बजाते थे और प्रताप जी का

साज 'इकतारा' था। वहीं से इन्हें पहाड़ी धुने बनाने और उन पर गीत रचने का शौक हुआ। इन्होनें दो गीत बनाए और गाए। यह गीत लोगों ने इतने सुने कि वह लोकगीत बन गए। वे गीत हैं–

ठण्डी–ठण्डी हवा झुलदी , झुलदे चीहलां दे डालू जीणा कांगड़े दा
जे तू चलया नेफा नौकरी मेरे गले दे हारे लैदां जाया।

इन्हीं गीतों के कारण 23 सितम्बर, 1969 को लालचंद प्रार्थी जी से इन्हें प्रमाण–पत्र मिला। सन् 1970 से हिमाचल प्रदेश के भाषा संस्कृति विभाग और कला संस्कृति भाषा अकादमी के कार्यक्रमों से जुड़ते चले गए। 27 अक्तूबर ,1994 को हिमाचल साहित्यकार परिषद , धर्मशाला ने सम्मान पत्र देकर सम्मानित किया। इन्होनें अपने क्षेत्र और अन्य जिलों में जाकर लोकसंगीत का खूब प्रचार–प्रसार किया। इन्होनें सौ से ज्यादा गीत लिखे हैं जो अमूल्य विरासत के रूप में इनकी डायरियों में सुरक्षित हैं। इनकी दो कैसेट भी बनी हैं। यह कहते हैं कि "मेरे गीतों को लोकगीत मानकर लोगों ने रिकार्ड करवा दिया है" । इनकी गायिकी में लोकसंगीत परम्परा सुरक्षित हैं। इससे कांगड़ा लोकसंगीत परमपरा को बड़ा बल मिला हैं। इनके गीतों में एक गहरी संवेदना है तथा जब तक यह गीत रहेंगे प्रताप चंद शर्मा जी को याद सदैव बनी रहेगी। इनकी कलाकृतियों को हमेशा याद किया जाएगा। ईश्वर इन्हें स्वस्थ एंव दीर्घायु रखे, जिन्होनें लोकगीतों के चलन को एक नया मोड़ दिया तथा कांगड़ी – पहाड़ी साहित्य समृद्ध होता रहे।

इनके लिखे गीतों की पंक्तियां इस प्रकार हैं–
उच्चे–उच्चे पर्वत बर्फा री धारा, मंझ बैठी जगतम्बा।
दो नारां, दो नारां वे लोको! लसकदियां तलवारां!! दो नारां।
कांगड़ा तां माता तेरा बड़ा सुहाना
चोरी–चोरी पांदा चिट्ठियां
पखुए दी रूण–झुण लायां गुलाबो गोरिए।

इत्यादि लोकगीत अपने विशेष पहचान बनाए हुए है। कांगड़ा का ऐसा ही लोकगीत जो परम्परागत रूप से चला आ रहा है। इस लोकगीत में ऐसे व्यक्ति की गाथा का वर्णन है जो कि घरेलू झगड़े के कारण अपनी भाभी के टोकने पर साधू बन गया। साधू बनने के उपरान्त लोकगायक किस प्रकार साधू जोगिया को याद करते हैं। यह इस गीत में दर्शाया गया है।

भला साधू जोगिया ओ मोया कांगड़े दे बन्ने,
भलेया ओ कांगड़े दे बन्ने धूणा तेरा ओ जोगिया।
भला साधू जोगिया ओ मोया भाभिया रे टोक्या,
भलेया ओ भाभिया रे टोक्या जोग तैं धारया ओ जोगिया।

स्वरलिपि (ताल दीपचंदी)

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14
ध	सा	–	श्रे	सा	–	–	रे	–	म	प	–	–	–
भ	ला	ऽ	सा	ऽ	धू	ऽ	जो	ऽ	गि	या	ऽ	ऽ	ऽ

म	प	म	ध	–	–	प	प	–	–	–	–	–	–
ओ	ऽ	ऽ	मो	ऽ	या	ऽ	को	ऽ	ऽ	ग	ड़े	ऽ	ऽ
प	ध	म	रे	–	–	–	रे	म	प	–	ध	–	–
रे	ऽ	ब	न्ने	ऽ	ऽ	ऽ	भ	ले	या	ऽ	ओ	ऽ	ऽ
प	–	–	–	–	ऽ	प	ध	म	रे	–	–	–	–
कां	ऽ	ग	ड़े	ऽ	ऽ–	रे	ऽ	ब	न्ने	ऽ	ऽ	ऽ	ऽ
रे	म	प	ध	ध	–	ध	प	ध	म	–	–	–	–
धू	णा	ऽ	ते	रा	ऽ	ओ	जो	ऽ	गि	ऽ	या	ऽ	ऽ
x			2				०			3			

इस गीत में मुख्यतः राग दुर्गा की छाया पड़ती है। सा रे म प ध सां, सां ध प म रे सा। इस राग में गांधार निषाद वर्जित है। वादी स्वर मध्यम और सम्वादी षडज है।

स्वर समूह –

'भला ओ साधू जोगिया ओ मोया कांगड़े रे बन्ने' में
धसा रे म प प ध प प रे, रे म प ध, प प ध म रे सा
धूणा तेरा ओ जोगिया
रे म प ध म रे, प ध प म रे ध सा
बहुत सुंदर ढंग से राग दुर्गा के स्वर समूह प्रयुक्त हुए हैं।

उपसंहार

इस प्रकार इन पारम्परिक लोक गायकों की कलाकृतियों से आने वाली पीढ़ी लाभान्वित हो रही है। इस अमूल्य निधि को सुरक्षित रखना अब नई पीढ़ी की जिम्मेदारी है ताकि आगे आने वाली पीढ़िया भी पूर्वजों द्वारा संजोयी लोकसंगीत की विरासत से पूर्णतः लाभ हो सके। हिमाचल की गौरवपूर्ण संस्कृति को संजोए रखने में यह प्रयास सहायक सिद्ध हो सकता है। इन लोकगायकों को शत् शत् नमन है जिनके प्रयासों से इनकी कलाकृतियों को सुनने संजोने का अवसर मिला।

संदर्भ

व्यथित डॉ० गौतम (1999), पर्वत से उभरे कलाकार, हि०प्र० कला सं० भाषा अकादमी
शर्मा मेला राम (1999)ए पर्वत से उभरे कलाकारए हि०प्र० कला सं० भाषा अकादमी
परमार अच्छर सिंहए (साक्षात्कार)ए गांव बिदरोही जिला मण्डी०(हि०प्र०)
शर्मा ज्वाला प्रसादए (साक्षात्कार)ए गाँव रियूर, जिला मण्डी (हि०प्र०)
बलोखरा जगमोहन (2001)ए हिमाचल सामान्य ज्ञानए (एच०जी० पब्लिकेशन) नई दिल्ली
सहगल के एल०ए हिमाचल प्रदेश का लोकसंगीत, हि०प्र०सं० भाषा अकादमी
बलोखरा जगमोहनए द वंडर लैंड ऑफ हि०प्र०ए एच०जी० पब्लिकेशन नई दिल्ली